Cognitive Thinking: An International Journal of Interdisciplinary Studies
Volume-1, Issue-3 (July-September 2025), pp.153-162, ISSN: 3107-5088
www.cognitivethinking.in

प्राचीन भारतीय समाज में अछूतों की उत्पत्ति : एक ऐतिहासिक अध्ययन

लेखकद्वय:-
1. प्रो. (डॉ.) संजय कुमार सिंह
प्रोफेसर, इतिहास विभाग, एम.एम.एच. कॉलेज, गाजियाबाद
2.सूर्य प्रकाश
असिस्टेंट प्रोफेसर, इतिहास विभाग, मिहिर भोज पी.जी. कॉलेज, दादरी, गौतमबुद्ध नगर

प्रस्तावना:- स्वतंत्रता एवं समानता भारतीय संस्कृति की प्रमुख विशेषताऐं रही है लेकिन इन विशेषताओं के साथ भारतीय इतिहास में समय-समय पर विचलन के भी संकेत मिलते हैं। जब एक व्यक्ति, समूह या समुदाय द्वारा अपनी स्वार्थ सिद्धि हेतु वैदिक एवं सूत्र-स्मृति कालीन आख्यानों का प्रयोग कर किसी अन्य व्यक्ति, समूह या समुदाय के सदस्यों पर अस्पृश्यता, बेगारी कार्य, सार्वजनिक स्थलों पर उनके अप्रवेश आदि जैसे विविध सामाजिक-आर्थिक प्रतिबंध आरोपित कर दिए जाते हैं। जिन्हें आरोपित करने वाला समाज अपना जन्मसिद्ध अधिकार और पीड़ित अर्थात अछूत समाज अपनी नियति मानता है। अतः सोचनीय है कि दोनों वर्गों में इस प्रकार की भावना का प्रादुर्भाव किन परिस्थितियों में हुआ? इसकी सामाजिक पृष्ठभूमि क्या थी? इसके लिए प्रस्तुत शोधालेख में प्राचीन भारतीय समाज में अछूतों की उत्पत्ति से संबंधित ऐतिहासिक एवं प्रामाणिक अध्ययन प्रस्तुत किया जाएगा।

बीजशब्द:- अछूत, दास, शूद्र, आर्य, ऋग्वेद, अथर्ववेद, वर्ण, समुदाय, जनजाति।

मुख्य अंश:- अछूतों की उत्पत्ति विषयक प्रसंग की ऐतिहासिकता लगभग 2000 ईसा पूर्व तक जाती है। भारत की ओर दूसरी सहस्राब्दि के आरंभ से लेकर अंत तक क्रमशः दास, आर्य, शूद्र आदि जनजातियों का आगमन हुआ। ईरान के धर्मग्रंथ जेंद अवेस्ता में उल्लेखित सीथियन जनजाति दहे का कैस्पियन स्टेपीज क्षेत्र से भारत की ओर लगभग 1750 ईसा पूर्व में आगमन हुआ।[1] इन्हें ही भारत में दास कहा गया। दास जनजाति ने भारत में एक

नगरीय समाज की स्थापना की। दास जनजाति के साथ-साथ एक अन्य समानांतर समुदाय दस्युओं का भी उल्लेख मिलता है। इन दोनों की नगरीय संस्कृति के प्रमुख तत्वों के रूप में इनके पास अनेक किलेबंद बस्तियाँ,[2-6] अस्त्र-शस्त्र, प्रचुर धन-संपत्ति एवं मवेशी आदि थे। जबकि इनकी यज्ञ-हवन आदि में कोई रुचि नहीं थी। यह दोनों ही समुदाय जातियां अलग-अलग थी।[7] क्योंकि ऋग्वेद में दास शब्द का उल्लेख 61 बार जबकि दस्यु शब्द का उल्लेख 84 बार हुआ है। आर्य अपेक्षाकृत दासों के प्रति उदार रहे। दास और दस्यु आर्यों की अपेक्षा नगरीय होने के कारण अधिक सभ्य एवं शक्तिशाली थे किंतु ये भारत के मूल निवासी नहीं थे। [8]

अधिकतर विद्वान सहमत है कि दास जनजाति के बाद आर्य वर्ण के लोग नए जंगल और गोचरों की खोज में डेन्यूब नदी के किनारे-किनारे वालेशिया तक बढ़े और आगे दक्षिण में बास्फोरस और दर्रे दानियाल पर जा उतरे। उन्हें पार करके एशिया माइनर का पठार पार करने के बाद वह उफ्रातु और तिग्रा नदी (फरात और दजला नदी, वर्तमान इराक) की अंतर्वेदी के सिरे पर जा निकले किंतु वहाँ अन्य बलवान जाति का राज्य होने के कारण उससे बचते हुए तबरेज और तेहरान के रास्ते ईरान में प्रविष्ट हुए और मशद, हेरात और बल्ख की ओर आगे बढ़े।[9] और यहीं से लगभग 1500 ईसा पूर्व में भारत के सप्त सैन्धव प्रदेश में अप्रवासी के रूप में आए।[10] वहीं दूसरी ओर विद्वानों का एक वर्ग आर्यों को भारत में ही उत्पन्न प्रजाति बताते हैं। वर्ष 2019 में *सेल* पत्रिका में प्रकाशित एक शोध पत्र में वसंत शिंदे, डॉ. नीरज राय के नेतृत्व में राखीगढ़ी से प्राप्त पुरातात्विक अभिलेखों के आलोक में आर्यों को भारत का ही मूल निवासी बताया गया है।

आर्यों के आरंभिक जीवन में कार्य विभाजन संबंधी कोई वर्ण व्यवस्था नहीं थी। प्रत्येक आर्य जीवन हेतु आवश्यक प्रत्येक कर्म को स्वयं करने में सक्षम था। वह स्वयं ही अध्ययन- अध्यापन करने, यज्ञ-हवन करने, अपने कबीले की रक्षा करने, दूसरे कबीले पर आक्रमण करने, अनाज उत्पन्न करने तथा साफ- सफाई करने को अपना कर्त्तव्य मानता था। ऋग्वेद के नवें मंडल में वर्णन है कि मैं कवि हूँ, मेरे पिता वैद्य है, मेरी माँ अन्न पीसने वाली है। भिन्न-भिन्न व्यवसायों से जीविकोपार्जन करते हुए हम एक साथ रहते हैं।[11] अतः स्पष्ट है कि ऋग्वैदिक काल में एक ही परिवार के लोग विभिन्न व्यवसाय या कर्म वाले हो सकते थे। समय के साथ-साथ जैसे-जैसे आर्यों के विभिन्न कबीलों पर जनसंख्या का दबाव बढ़ता गया वैसे-वैसे उनके आंतरिक एवं बाह्य संघर्षों की घटनाओं में वृद्धि होती गई। इसी क्रम में उनका संघर्ष उनसे पूर्व भारत में आने वाले दास-दस्यु समुदाय से हुआ। इस संघर्ष के अनेक कारण थे जिनमें से कुछ प्रमुख है जैसे:- आर्यों के साम्राज्य विस्तार की मंशा, दास-दस्यु समुदाय के किलेबंद बस्तियों को अपने अधिकार में करने की इच्छा, दास-दस्यु समुदाय के मवेशी एवं धन

संपत्ति को अधिग्रहीत करने का विचार, धार्मिक रीति-रिवाजों में भिन्नता, नगरीय एवं ग्रामीण सभ्यताओं से संबंधित होने के कारण उत्पन्न मतभिन्नता, शारीरिक रंग-रूप एवं बनावट में भिन्नता, बोलचाल की रीति में भिन्नता आदि। इन संघर्षों में आर्यों के प्रमुख देवताओं इंद्र, अग्नि, वरुण आदि ने आर्यों की ओर से महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस संदर्भ में आर्यों ने अपने इष्ट देवता इंद्र से अनुरोध किया कि वे दास जनजाति का सर्वनाश करें। [12-14] आर्यों के अनुरोध को स्वीकार कर इंद्र ने दास जनजाति को अपने वश में किया।[15] तथा दस्युओं को मार कर इंद्र ने आर्य वर्ण की रक्षा की है। [16,17] उल्लेखनीय है कि ऋग्वेद में आर्य और दास को दो वर्णों के रूप में प्रस्तुत किया गया है। ऋग्वैदिक काल के आरंभिक चरण में दासों को मारे जाने के कारण उनकी पत्नियाँ शेष बची जिन्हें ऋग्वेद में दासी कहा गया है। उन्हें आर्यों द्वारा घर से बाहर उत्पादन कार्य अर्थात खेती-बाड़ी में ना नियोजित कर उनसे घरेलू कार्यों को कराया गया।[18] इन्हें उपहार के रूप में भी दिया जाता था। ऐसा कहा गया है कि पुरुकुत्स के बेटे त्रसदस्यु जिसने दासों को हराया था ने उपहार के रूप में 50 दासियाँ दी। अथर्ववेद के अनुसार इन दासियों के हाथ भीगे रहते थे। वे ओखल- मूसल कूटती थी तथा गाय के गोबर पर पानी छिड़कती थी। [19, 20]

इन संघर्षों में आर्यों ने दासों की अपेक्षा दस्युओं के प्रति अधिक कठोर नीति अपनाई। आर्यों द्वारा उनकी बस्तियों को नष्ट कर दिया गया, उनके मवेशियों, धन- संपत्ति इत्यादि को छीन लिया गया एवं उन्हें अपने सेवक वर्ग में शामिल किया। आर्यों द्वारा दासों की हत्या किए जाने पर ऋग्वेद में *दासहत्या* शब्द का प्रयोग नहीं मिलता है जबकि अनेक स्थान पर दस्युओं की हत्या से संबंधित विभिन्न शब्दों जैसे *दस्युहत्या, दस्युहंतम, दस्युघन* आदि [21, 22, 23] का प्रयोग मिलता है। दस्युओं के लिए ऋग्वेद में यज्ञ कर्म न करने वाले (अकर्मन/ अयज्वन) किसी चीज को न मानने वाले (अमन्तु), आर्यों से भिन्न सामाजिक कानून मानने वाले (अन्यव्रत:) आर्यों के सामाजिक कानून को न मानने वाले (अव्रत:) मनुष्यों जैसा व्यवहार न करने वाले (अमानुष:) जैसे विशेषणों का प्रयोग किया गया है।[24] यद्यपि आर्यों ने दासों को भी हराकर अपने अधीन किया लेकिन दस्युओं की अपेक्षा दासों के आर्यों से अच्छे संबंध रहे। इसका प्रमुख कारण आर्यों के विभिन्न आंतरिक एवं बाह्य संघर्षों में दासों द्वारा आर्यों की सहायता करना था। यही कारण है कि दास वर्ण के अनेक व्यक्ति आर्य वर्ण के रीति-रिवाज अपनाने लगे जिनमें से भरत जन के त्रित्सु कुल का राजा दिवोदास प्रमुख है जो प्रारंभिक रूप से दास थे लेकिन उन्होंने आर्यों के रीति-रिवाजों से प्रभावित होकर स्वयं को आर्य समूह से संबंधित किया। ऋग्वेद में वर्णित सबसे पवित्र नदी (नदीतमा) सरस्वती नदी (हरकेति या आधुनिक अर्घनदाब) के किनारे दिवोदास का अराकोशिया (आधुनिक अफगानिस्तान) में पणियों और दासों से संघर्ष हुआ जिसमें वह विजयी हुआ। [25, 26] इन्होंने दास

सेनापति शंबर को हराया।[27] जिसके अधीन लगभग 90 से 100 दुर्ग थे। [28] योग्य दासों का सम्मान ऋग्वैदिक समाज में इतना अधिक बढ़ गया कि आर्य द्वारा अपने विरोधी आर्यों तथा बाह्य संघर्ष के दौरान दासों की सेनाऐं भी प्राप्त होने लगी। बलबूथ तथा तरुक्ष जैसे दास सरदारों द्वारा दिए गए उपहार को ऋषि अश्व्य ने भी स्वीकार किया।[29] इस तरह से आर्य-दास संविलियन प्रक्रिया आरंभ हो गई।

ऋग्वैदिक काल में आर्यों के मध्य भी आंतरिक संघर्ष विद्यमान थे । ऋग्वेद में आर्य शब्द मात्र 36 बार आया है जिसमें से 9 बार में यह बताया गया है कि आर्यों के मध्य आपसी मतभेद थे।[30-38] इसी आपसी संघर्ष का विशिष्ट उल्लेख ऋग्वैदिक काल में लड़े गए *दशराज्ञ युद्ध* के रूप में मिलता है। [39] इस युद्ध में जहाँ एक ओर भरत जन के त्रित्सु कुल के राजा एवं दिवोदास के पुत्र सुदास थे।[40, 41] वहीं दूसरी ओर 10 जनों (पाँच प्रमुख जन:- पुरु, अनु, यदु, दुह्यु, तुर्वश; पाँच गौण जन:- अलिन, पक्थ, भलानस, शिवि, विषाणि) का समूह था जिनका नेतृत्व पुरु जन कर रहा था। इसमें सुदास के पुरोहित गुरु वशिष्ठ तथा 10 राजाओं के पुरोहित गुरु विश्वामित्र थे। इस युद्ध में दोनों पक्षों में आर्य और अनार्य दोनों सम्मिलित थे। इस युद्ध की पृष्ठभूमि का निर्माण राजा सुदास द्वारा अपने पुरोहित विश्वामित्र के स्थान वशिष्ठ को नियुक्त करते ही हो चुका था। क्रोधित होकर विश्वामित्र ने 10 राजाओं का आश्रय प्राप्त किया। तत्पश्चात यह युद्ध राजनीतिक महत्वाकांक्षाओं के चलते 10 राजाओं द्वारा परुष्णी (रावी) नदी को मोड़ने संबंधी प्रसंग से आरंभ हुआ।[42] इस युद्ध में राजा सुदास की विजय हुई और इस तरह दिवोदास द्वारा स्थापित अराकोसिया के साम्राज्य को उसने पंजाब तक विस्तारित किया। [43]

ऋग्वैदिक कालीन आर्य व दास- दस्यु संघर्षों एवं आर्यों के आंतरिक संघर्षों का प्रभाव आर्यों की आंतरिक सामाजिक व्यवस्था पर भी देखा गया कि दास- दस्युओं एवं शत्रु आर्यों से लगातार संघर्षों के चलते आर्यों को अब कार्य विभाजन की आवश्यकता उत्पन्न हुई और इस तरह ऋग्वैदिक काल के अंतिम चरण में प्रारंभिक रूप से तीन वर्णों का जन्म हुआ:-

1. ब्राह्मण:- जिनका प्रमुख कार्य ऋग्वेद के मंत्रों की रचना करना, उच्चारण करना, अध्ययन- अध्यापन करना, क्षत्रिय राजाओं के सलाहकार के रूप में कार्य करना, यज्ञ-हवनो आदि का अनुष्ठान करना था।
2. राजन्य: इन्हें आगे चलकर क्षत्रिय कहा गया। इनका प्रमुख कार्य कबीले के लोगों की रक्षा करना एवं साम्राज्य विस्तार हेतु निकट क्षेत्रों पर आक्रमण करना।

3. विश :- ब्राह्मण एवं राजन्य को छोड़कर शेष समस्त आर्यों को सामान्य प्रजा या विश के अंतर्गत सम्मिलित माना गया। इन्हें ही आगे चलकर वैश्य कहा गया।[44]

आर्यों की उक्त त्रिवर्णीय व्यवस्था के अतिरिक्त ऋग्वेद में उल्लेखित दास वर्ण इस काल के अंतिम चरण में केवल नाम मात्र हेतु शेष बचा था। इस चरण में दास शब्द अब जनजाति का प्रतीक ना होकर एक सामाजिक वर्ग बन गया। दास वर्ण के सदस्य या तो आर्यों से संघर्ष के दौरान मारे जा चुके थे या उन्होंने आर्य वर्ण को अपना लिया था। अब *दास* शब्द सेवक अर्थात नौकर का पर्याय माना जाने लगा। अब इस परवर्ती दास समुदाय में निम्न व्यक्ति/ वर्ग शामिल माने गए:-

1. दास-दस्यु वर्ण के अवशेष सदस्य
2. आर्य वर्ण के विद्रोही व्यक्ति
3. मुनाफाखोरी करने वाले बहिष्कृत पणि व्यापारी [45]
4. ऋण न चुकाने वाले व्यक्ति
5. युद्ध में हारे हुए व्यक्ति

जब दास जनजाति का दास नामक सेवक वर्ग के रूप में रूपांतरण हो रहा था। लगभग इसी समय 1000 ईसा पूर्व के आस-पास ईरान से शूद्र नामक जनजाति का भी भारत की ओर प्रवास हुआ। [46] उल्लेखनीय है कि अथर्ववेद 3 खंडों एवं 20 भागों में विभाजित है। प्रथम खंड में भाग 1 से 8 तक, द्वितीय खंड में भाग 8 से 12 तक तथा तृतीय खंड में भाग 13 से भाग 20 तक का वर्णन है। भागों में क्रमशः आगे बढ़ने पर भारत में आने वाली इस शूद्र जनजाति का शूद्र वर्ण की ओर रूपांतरण के संकेत मिलते हैं। अथर्ववेद के आरंभिक भाग एवं महाभारत में शूद्रों को जनजाति माना गया है। डॉ भीमराव अंबेडकर के अनुसार शूद्र कबीले या वर्ग की व्यक्तिवाचक संज्ञा है। [47] शूद्रों को एक जनजाति माने जाने के पक्ष में निम्न साक्ष्य प्रस्तुत किए जा सकते हैं:-

1. अथर्ववेद में प्राप्त दो विभिन्न संदर्भों में पुजारी चाहता है कि हर किसी को चाहे वह आर्य हो या शूद्र, जड़ी-बूटी की सहायता से परखें ताकि जादूगर का पता चल जाए।[48, 49] इन संदर्भों में शूद्र शब्द का प्रयोग जनजाति के अर्थ में हुआ है क्योंकि ऋग्वैदिक काल में जो संघर्ष आर्य और दासों के मध्य होता था वहीं अब आर्य व शूद्रों के मध्य हो गया।
2. अथर्ववेद के एक आरम्भिक संदर्भ में जब वर्णों का उल्लेख किया गया है तो वहाँ केवल ब्राह्मण, राजन्य व वैश्य का ही उल्लेख किया गया है ना की शूद्र का। [50]

3. अथर्ववेद में *तक्मन* ज्वर के संबंध में संदर्भ मिलता है जिसमें *तक्मन* ज्वर से अपेक्षा की गई है कि वह बाह्लिकों, मुजबंतों तथा महावृषों के साथ-साथ कुल्टा शूद्र महिलाओं को भी ग्रसित करें। [51, 52] अथर्ववेद इस संदर्भ में शूद्र जनजाति के रूप में वर्णित है क्योंकि उसका उल्लेख भी अन्य जनजातियों के साथ ही हुआ है।
4. महाभारत में शूद्रों का उल्लेख आभीर जाति के साथ बार-बार हुआ है। इसके अतिरिक्त शूद्रों का वर्णन अन्य जातियों जैसे दरदों, तुखारों, पह्लवों के साथ भी हुआ है। [53] जिससे स्पष्ट है कि शूद्र आरंभिक रूप से जनजाति थे।
5. महाभारत में नकुल ने अपनी दिग्विजय के दौरान जिन जनजातियों को हराया था उस सूची में शूद्रों का भी नाम आता है। [54]
6. महाभारत में उल्लेख है कि राजसूय यज्ञ के समय युधिष्ठिर ने जिन जनजातियों को उपहार दिए, उनमें शूद्रों का भी नाम सम्मिलित था। [55]
7. महाभारत के सभापर्व के 32वें अध्याय में शूद्र गणराज्य का उल्लेख है। [56]

अथर्ववेद के परवर्ती भागों में हमें शूद्र जनजाति के वर्ण के रूप में रूपांतरित होने के संकेत मिलते हैं इस हेतु संदर्भ निम्नवत है:-

1. अथर्ववेद के एक मंत्र में ब्राह्मण, राजन्य या शूद्र द्वारा किए गए जादू-टोने का उल्लेख है और बताया गया है कि प्रयोग करने वाले को जादू का झटका भी लग सकता है।[57] अतः स्पष्ट है कि पुरोहितों द्वारा अन्य विभिन्न वर्णों को जादू-टोटके करने से रोकने का प्रयास किया गया है ताकि उनका एकाधिकार खंडित ना हो।
2. अथर्ववेद में एक स्थान पर दर्भ (दूब) घास से प्रार्थना की गई है कि वह प्रार्थी को ब्राह्मण, क्षत्रिय, शूद्र और आर्य का प्रिय पात्र बनाएं।[58]
3. अथर्ववेद में उल्लेख है कि देवों और राजाओं के साथ-साथ शुद्ध तथा आर्य दोनों के ही प्रिय पात्र बनने की इच्छा व्यक्त की गई है।[59]
4. अथर्ववेद के पुरुष सूक्त में चारों वर्णों की उत्पत्ति एक आदि पुरुष/ ब्रह्म के चार अंगों से बताई गई है ।उसके मुख से ब्राह्मण वर्ण, भुजाओं से क्षत्रिय वर्ण, पेट से वैश्य वर्ण जबकि चरणों से शूद्र वर्ण की उत्पत्ति बताई गई है। [60]

उक्त से स्पष्ट है कि शूद्रों शब्द का प्रयोग अन्य वर्णों के साथ किया गया है। अतः अथर्ववेद के अंतिम भाग में अर्थात उत्तर वैदिक काल के अंतिम चरण में शूद्रों का वर्ण के रूप में उल्लेख मिलता है। उल्लेखनीय है कि उत्तर वैदिक काल के आरंभिक चरण में आर्य समुदाय और शूद्र जनजाति के बीच ऋगवैदिक कालीन आर्य और दास समुदाय की भांति संघर्ष उत्पन्न हुआ और इस संघर्ष में शूद्र जनजाति की पराजय हुई और उन्हें आर्य समुदाय के अधीन मान लिया गया। उत्तर वैदिक काल के अंतिम चरण में अब शूद्र जनजाति, एक जनजाति के रूप में न होकर एक ऐसे शोषित, वंचित समुदाय के रूप में दृष्टिगोचर होने लगी जिसका कार्य अन्य तीन उच्च वर्णों की सेवा करना एवं साफ सफाई करना था और इन्ही शूद्रों को एक वर्ण मानकर ऋग्वैदिक काल के अंतिम चरण में उत्पन्न दास अर्थात सेवक वर्ग को भी इसके अंतर्गत सम्मिलित माना गया और उत्तर वैदिक काल के अंतिम चरण तक चौथे वर्ण शूद्र वर्ण का गठन हो गया। इसका उल्लेख अथर्ववेद के 19वें अध्याय के छठे सूक्त में मिलता है और इसी समय इसी सूक्त को शूद्रों की उत्पत्ति से संबंधित मानकर ऋग्वेद के दसवें मंडल में पुरुष सूक्त के रूप में अंतर्वेशित कर दिया गया क्योंकि लगभग उसी समय ही शूद्र जनजाति का भारत की ओर आगमन हुआ था।[61] यह मंत्र इस प्रकार है:-

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्बाहू राजन्यः कृतः ।
ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत ।।[62, 63]

उपसंहार:- उक्त के विवेचन से स्पष्ट है कि आरंभ में दासों एवं एवं दस्यु नामक समुदाय ने नगरीय सभ्यता विकसित की जिसे ग्रामीण सभ्यता वाले परवर्ती आर्यों ने नष्ट कर दिया। आर्यों ने उनमे से अधिकतर को अपने वर्ण में सम्मिलित कर लिया और शेष को अपने सेवक के रूप में दास वर्ग के रूप में मान्यता दी। इसके बाद उत्तर वैदिक काल के आरंभ में भारत आने वाले शूद्र जनजाति के सदस्यों से भी आर्यों का संघर्ष हुआ और इसमें भी आर्यों की ही विजय हुई। और इस तरह विजित शूद्र जनजाति के अवशेष सदस्यों, पूर्ववर्ती दास वर्ग, शत्रु आर्यों एवं अन्य आर्य विरोधियों आदि को मिलाकर चतुर्थ वर्ण *शूद्र वर्ण* का गठन संभव हुआ। यह वर्ण श्रमिक एवं सेवक समुदाय से संबंधित होने के कारण ऋग्वेद तथा अथर्ववेद के पुरुष सूक्त में इस वर्ण की उत्पत्ति आदि पुरुष के चरणों से बताई गई। लेकिन सूत्र-स्मृति कालीन भारतीय समाज में श्रेष्ठता की अंधी दौड़ के चलते इस वर्ण के सदस्यों पर विविध प्रतिबंध लगाकर उन्हें अछूतों की श्रेणी में पहुंचा दिया गया। और इस तरह आधुनिक कालीन हरिजन, दलित कहे जाने वाले वंचित एवं पीड़ित वर्ग की सामाजिक पृष्ठभूमि स्थापित हो गई।

संदर्भ ग्रंथ सूची:-

1. आर. एस. शर्मा (अनुवादक: विजय नाथ ठाकुर), शूद्रों का प्राचीन इतिहास, दि मैकमिलन कंपनी ऑफ़ इंडिया लिमिटेड, दिल्ली, 1979, पृष्ठ संख्या 18
2. ऋग्वेद 1.103.3
3. पूर्वोक्त 2.19.6
4. पूर्वोक्त 4.30.20
5. पूर्वोक्त 6.20.10
6. पूर्वोक्त 6.31.4
7. डॉ. भीमराव अंबेडकर, शूद्र कौन थे?, बुद्धम पब्लिशर्स, जयपुर, 2023, पृष्ठ संख्या 63
8. पूर्वोक्त, पृष्ठ संख्या 65
9. राधा कुमुद मुखर्जी (अनुवादक: वासुदेव शरण अग्रवाल) हिंदू सभ्यता, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2007, पृष्ठ संख्या 80-81
10. राम शरण शर्मा, प्रारंभिक भारत का परिचय, ओरिएंट ब्लैक स्वान प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, 2010, पृष्ठ संख्या 110
11. ऋग्वेद 9.112.3
12. पूर्वोक्त, 2.11.4
13. पूर्वोक्त, 6.25.2
14. पूर्वोक्त, 10.148.2
15. पूर्वोक्त, 4.48.4
16. पूर्वोक्त, 3.34.9
17. अथर्ववेद 20.11.9
18. आर. एस. शर्मा (अनुवादक: विजय नाथ ठाकुर), शूद्रों का प्राचीन इतिहास, दि मैकमिलन कंपनी ऑफ़ इंडिया लिमिटेड, दिल्ली, 1979, पृष्ठ संख्या 17
19. अथर्ववेद 12.3.13
20. पूर्वोक्त, 12.4.9
21. ऋग्वेद 1.51.5,6
22. पूर्वोक्त 10.95.7
23. पूर्वोक्त 10.99.7
24. पूर्वोक्त, 10. 22. 8

25.डी. आर. भंडारकर, सम एस्पेक्ट्स ऑफ़ असिएंट इंडियन कल्चर, यूनिवर्सिटी ऑफ़ मद्रास, 1940, पृष्ठ संख्या 2-3
26.ऋग्वेद 6.61.1
27.राम शरण शर्मा, प्रारंभिक भारत का परिचय, ओरिएंट ब्लैक स्वान प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, 2010, पृष्ठ संख्या 110
28.राधा कुमुद मुखर्जी (अनुवादक: वासुदेव शरण अग्रवाल) हिंदू सभ्यता, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2007, पृष्ठ संख्या 86
29.दामोदर धर्मानंद कौसंबी (अनुवादक: गुणाकर मुले), प्राचीन भारत की संस्कृति और सभ्यता, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2009, पृष्ठ संख्या 111
30. ऋग्वेद 4.33.3
31.पूर्वोक्त, 4.66.6
32.पूर्वोक्त, 7.83.1
33. पूर्वोक्त, 8.24.27
34.पूर्वोक्त, 10.38.3
35.पूर्वोक्त, 10.69.6
36.पूर्वोक्त, 10.83.1
37.पूर्वोक्त, 10.86.19
38.पूर्वोक्त, 10.102.3
39.पूर्वोक्त, 7.33.3
40.डॉ. भीमराव अंबेडकर, शूद्र कौन थे?, बुद्धम पब्लिशर्स, जयपुर, 2023, पृष्ठ संख्या 75
41.दामोदर धर्मानंद कौसंबी (अनुवादक: गुणाकर मुले), प्राचीन भारत की संस्कृति और सभ्यता, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2009, पृष्ठ संख्या 108
42.पूर्वोक्त, पृष्ठ संख्या 109
43.डी. आर. भंडारकर, सम एस्पेक्ट्स ऑफ़ असिएंट इंडियन कल्चर, यूनिवर्सिटी ऑफ़ मद्रास, 1940, पृष्ठ संख्या 4
44. डॉ रमेश चंद्र मजूमदार (अनुवादक: परमेश्वरीलाल गुप्त), प्राचीन भारत, मोतीलाल बनारसी दास प्रकाशन, दिल्ली, 2019, पृष्ठ संख्या 33
45.यास्क, निरुक्त, 6.27
46.आर. एस. शर्मा (अनुवादक: विजय नाथ ठाकुर), शूद्रों का प्राचीन इतिहास, दि मैकमिलन कंपनी ऑफ़ इंडिया लिमिटेड, दिल्ली, 1979, पृष्ठ संख्या 26

47.डॉ. भीमराव अंबेडकर, शूद्र कौन थे?, बुद्धम पब्लिशर्स, जयपुर, 2023, पृष्ठ संख्या 64
48. अथर्ववेद 4.20.4,
49.पूर्वोक्त, 4.20.8
50.पूर्वोक्त, 5.17.9
51.पूर्वोक्त, 5.22.7
52.पूर्वोक्त, 5.22.8
53. महाभारत 6.10.65
54. पूर्वोक्त, 6.10.66
55.पूर्वोक्त, 2.47.7
56.डॉ. भीमराव अंबेडकर, शूद्र कौन थे?, बुद्धम पब्लिशर्स, जयपुर, 2023, पृष्ठ संख्या 64
57. अथर्ववेद 10.1.3
58. पूर्वोक्त, 19.32.8
59. पूर्वोक्त, 19.62.1
60.पूर्वोक्त, 19.6.6
61.आर. एस. शर्मा (अनुवादक: विजय नाथ ठाकुर), शूद्रों का प्राचीन इतिहास, दि मैकमिलन कंपनी ऑफ़ इंडिया लिमिटेड, दिल्ली, 1979, पृष्ठ संख्या 23
62.ऋग्वेद 10.90.12
63.अथर्ववेद 19.6.6